# डिंडौरी जिले में उपलब्ध वन संपदा का अध्ययन एवं उसका आर्थिक सामाजिक मूल्यांकन

**डॉ. मंजूषा रावत**

सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य विभाग)

माता गुजरी महिला महाविद्यालय, जबलपुर

## परिचय

पर्यावरण चेतना बढने़ के कारण वनौषधियों, जड़ी–बूटियों के प्रति लोगों में एक बार फिर रुचि जागृत हुई है। कुछ दशकों की विमुखता के बाद इन औषधियों पर लोगों का रुझान बढ़ा है। वनों में अनेक प्रकार की जड़ी–बूटियां पाई जाती हैं। खासकर डिंडौरी के वन तो इस प्रकार की वनस्पति से समृद्ध है। डिंडौरी के वनांचलों में पाई जाने वाली कुछ प्रमुख वनोपजों का संक्षिप्त परिचय।

## चिरोटा बीज

म.प्र. के वनो में चिरौटा का पौधा काफी देखने को मिलता है। यह एक छोटे खरपतवार पौधे के रूप में पाया जाता है। अधिक चराई वाले क्षेत्रों में यह ज्यादातर पाया जाता है।

चिरोटा के पत्ते, बीज और जड़ तीनों ठंडक देने वाले नेत्र रोग, लीवर टॉनिक, हृदय रोग औषधि निर्माण खांसी में उपचार के लिए प्रयोग किए जाते

हैं। पत्तों के द्वारा फोड़ा–फुंसी का भी उपचार किया जाता है। दाद, खाज, खुजली, छाजन के उपचार बीजों को मटठा में ठीक ढंग से भिगोकर लेप करने से लाभ होता है।

## लाख

हमारे दैनिक जीवन और लोक जीवन में लाख का विशेष महत्व है। चूड़ी, कंगन, खिलौने सहित अन्य उपयोगी सामग्री का निर्माण मे लाख का उपयोग होता है। लाख एक छोटे लेसीफर प्रजाति परिवार के कीड़े द्वारा स्त्राव रूप में बहाया जाता है। जिन क्षेत्रों में पलास, बेर, बबूल, घोंट, पीपल, कुसुम आदि के वृक्ष अच्छी तादाद में पाए जाते हैं, यहाँ पाया जाता है।

उपयोगिता के हिसाब से बाजार में गोल्डन सीड लाख सबसे अच्छी कोटि का माना जाता है। यह के शैलाक उद्योग में वाशिंग, पॉलिश सीलिंग बक्स, कारतूस फैक्टरी, विद्युत सामग्री निर्माण, प्लास्टिक व सेलुलोज, उद्योग व सिंथेटिक उद्योग में कच्चे माल में प्रयोग की जाती है।

## तीखुर

इस पौधे से कंद जनवरी माह में खोदकर निकाला जाता है। इसे साफ करते हुए सुखाकर पीसा जाता है। कंद का खास महत्व मात्र स्टार्च के लिए है जिसमें से रेशे अलग कर के वृद्धों, बीमारों और बच्चों को आहार के रूप में दिया जाता है। यह अच्छा पाचक होता है।

## कंद राईजोम

यह वनस्पति कंटीली झाड़ी अथवा बेला रूप में वनों में पाया जाता है। दवा के रूप में दंत मंजन, लकवा और बाहरी उपयोग की दवा निर्माण में लाई जाती है। म.प्र. में लगभग दो सौ मी. टन उत्पादन क्षमता है।

## अरंडी

अरंडी के नाम से प्रसिद्ध एक छोटी झाड़ी के रूप में होती है। गर्मी के बाद और बारिश के साथ इसमें पुष्पों के साथ नवंबर से मार्च तक पल्लनवित स्थिति में फल लगते हैं तभी संग्रहण किया जाता है।

## मरोडफ़ली

मरोडफ़ली के विविध उपयोग हैं। इसका समय सितंबर से नवंबर के मध्य होता है। पौधे का प्रत्येक भाग उपयोगी होता है।

मरोडफ़ली आंत की बीमारी, उदरशूल, अतिसार, आंव आना आदि के साथ–साथ अन्य बाह्य उपचार में काम आती है।

## बेल

बेल के विषय में विभिन्न आयुर्वेद ग्रंथ भरे पड़े हैं। बेल के वृक्ष का अपना धार्मिक महत्व भी है। बेल वृक्ष मध्यम आकार का होता है।

यह शीतलता प्रदान करने वाला अच्छा पाचक होता है। पके हुए फल का मुरब्बा, शर्बत, जेम, पौष्टिक खाद्य पदार्थ के अलावा पेट संबंधी विकार, आँव,

अतिसार में काफी उपयोगी होता है। गूदेदार बीजों के इर्द–गिर्द लसदार पदार्थ को गोंद की तरह चिपकाने, बार्निश निर्माण, विशिष्ट सीमेंटिंग पदार्थ एवं वाटर कलर उद्योग द्वारा रंगों में सजीवता और चमक लाने के लिए किया जाता है।

## बहेड़ा

त्रिफला के एक प्रमुख घटक के रूप में बहेड़ा का अपना विशिष्ट महत्व है। इसका पुष्पणकाल फरवरी से अप्रैल तक होता है। नवंबर–दिसम्बर माह में गोलाकार चपटे पाँच धारियों के निशान से विभक्त कठो मोटी पर्त वाले फल इकट्ठे लिए जाते हैं। फल लगने के बाद फरवरी–बार्च में पत्ते सामान्यतः झडने लगते हैं।

## इमली

अपनी सहज उपलब्धता के कारण इमली का औषधि और मसाला आदि में प्रमुख रूप से इस्तेमाल होता है। अपने विशाल आकार के कारण इमली घनी छाँव वाले वृक्ष के रूप में अलग ही नजर आ जाती है। इमली प्रदेश में हरेक स्थानों पर पाई जाती है।

## वन तुलसी

देशी औषधि विज्ञान में वन तुलसी का काफी महत्वपूर्ण स्थान है। यह छोटे आकार का भीनी महक वाला पौधा होता है। फरवरी से जुलाई के बीच इसके बीज और पत्ते इकटठे किए जाते हैं।

इसका इस्तेमाल सॉस, चटनी, सूप, सलाद मे स्वाद के लिए किया जाता है इसके अलावा खांसी, ज्वर, बलवर्द्धक टॉनिक, चर्मरोग, क्षय और श्वास रोग में काफी उपयोगी रहता है।

## धवई फूल

अपने गहरे लाल रंग के कारण यह अलग ही नजर आता है। इसका संग्रहण का उचित समय अप्रैल–मई के बीच होता है। उस समय धवई के फूल संग्रहीत कर सुखा लिये जाते हैं।

## महुआ

लोक जीवन से लेकर विभिन्न औषधीय कार्यों में महुआ का काफी इस्तेमाल होता है। महुआ का वृक्ष मध्यम आकार का होता है। इसके बीज से निकाला गया तेल परिष्करण कें बाद कोका, वनस्पति, तेल, बटर की तरह खाने, कन्फेक्शनरी बेकरी उत्पादों के निर्माण के साथ सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री निर्माण में प्रयुक्त किया जाता है। महुआ फूल से औषधि निर्माण के अलावा सिरका, अलकोहल, शुगरकेंडी उद्योग द्वारा भी इसका इस्तेमाल किया जाता है। पशु चारे, अच्छी श्रेणी की खाद, फूलों व तेल निकालकर पशुओं को आहार मिश्रण में मिलाकर दी जाती है। आदिवासियों को महुआ बहुत प्रिय होता है।

## आँवला

आँवले का औषधीय महत्व असाधारण है। इसके गुणों से आयुर्वेद के बड़े–बड़े ग्रंथ भरे पड़े हैं। हमारे प्राचीन ऋषि–मुनियों ने आँवले के इस्तेमाल से अपनी उम्र को ही रोक लिया था। जितना इसका औषधीय महत्व है उतना ही

इसका धार्मिक महत्व भी है। अनेक विटामिनों से भरपूर आंवला बेहद उपयोगी फल है। आंवले से बालों के झड़ते बालों को काले करने की भी औषधि बनाई जाती है। विभिन्न नेत्र रोगों के लिए आँवला एकदम रामबाण है। इसका उपयोग छपाई वाली स्याही में भी होता है। वृक्ष की छाल का उपयोग टेनिंग मटेरियल के रूप में होता है। फल के बीजों का उपयोग श्वास संबंधी रोगों में भी किया जाता है। आंवले का अवलेह, मुरब्बा, चटनी और शर्बत के अलावा नेत्र रोगों में इसका प्रयोग विभिन्न प्रकारों से होता है।

## नीम

नीम एक ऐसा वृक्ष है जो अमूमन हरेक स्थान पर देखने को मिल जाता है। नीम की औषधीय महत्ता ऐसी है कि इसका पेड़ जहां होता है वहां का वातावरण भी एकदम शुद्ध हो जाता है।

नीम की खली को उर्वरक, कीट नाशक एवं मिश्रित रूप में पशु आहार में प्रयुक्त किया जाता है। नीम के औषधीय गुण भी काफी है इसलिए आयुर्वेद के क्षेत्र में इसके काफी उपयोग हैं।

## जामुन

जामुन का वृक्ष मध्यम आकार और धनी छाँव वाला है। यह वृक्ष उन क्षेत्रों में अधिक होता है जहाँ की जलवायु आर्द उष्ण मिश्रित होती है।

टसर सिल्फ के कीड़े इस वृक्ष के पत्तें को बड़े चाव से खाते हैं। अपने खास औषधीय गुणों के यह दंत चिकित्सा, मधुमेह, रक्त शोधन आदि में काफी उपयोगी रहती है।

## आचार

इसका फल छोटा, गहरे काले रंग का और स्वादिष्ट होता है। अप्रैल से मई तक आचार फल इकट्ठे किए जाते हैं।

## अश्वगंधा

इसे अश्वगंधा के नाम से भी जाना जाता है। वन क्षेत्रों में यह मध्यम आकार की झाड़ी के रूप में पाया जाता है। इसकी जड़ में काफी औषधीय गुण होते हैं। कमर दर्द, गठिया, कफ आदि अनेक रोगों में यह काम आता है।

## सफेद मूसली

सफेद मूसली को भी अब बड़े पैमाने पर व्यावसायिक स्तर पर उगाया जाने लगा है। डेढ़ से दो वर्ष पुराने झाड़ीनुमा पौधे की जड़/कंद दिसंबर माह में संग्रहीत की जाती है। इसका भी अनेक आयुर्वेदिक औषधियों में उपयोग होता है।

उपर्युक्त वनोपजों के अलावा अनेक और भी वनोपजें है जिनके कि विविध उपयोग होने के नाते काफी व्यावसायिक संभावनाएं हैं। इनके प्रति अब काफी जनचेतना बढ़ रही है।

## डिंडौरी जिले में उपलब्ध वन संपदा का आर्थिक मूल्यांकन

लघु वन उपजों के साथ–साथ प्रमुख उपजों के उत्पादन में भी मजदूरी का काम मुख्य रूप से आदिवासी लोग करते हैं।

1. वनों से प्राप्त होने वाली महुआ, गोंद, चिरौंजी, बेर, मकई, ऑवला, गूलर, इमली तेंदू आदिवासी लोग प्रमुख रूप से खाद्य पदार्थ के रूप में इस्तेमाल करते है।

2. आदिवासियों का मुख्य व्यवसाय वनों से लकड़ी काटकर बेचना है। अन्य रोजगार कार्यक्रम एवं विकास कार्यो के कारण अब बहुत कमी आयी है।

3. वनों से प्राप्त होने वाली लकड़ी से छींद झाडू बनाकर बेचते हैं।

4. वनों से महुआ/अचार की चिरौंजी एकत्रित कर विक्रय करते हैं।

5. प्रमुख जड़ी–बूटियाँ सफेद मूसली, काली हल्दी, कचनार, केवकंद कहुआ, अर्जुन छाल, मैदा छाल जंगलों से प्राप्त कर उनका दवाईयों में उपयोग करते हैं, एवं विक्रय करते हैं।

6. जंगलों से शहद इकटठा कर उसका विक्रय करते हैं।

7. सबई रस्सी/मोवा रस्सी हाथ से एवं मशीन से बनाकर विक्रय करते हैं।

## डिंडौरी जिले के आर्थिक–सामाजिक घटक

भारत गाँवों का देश है। देश की लगभग दो–तिहाई से भी अधिक जनसंख्या गांवो में निवास करती है। यही स्थिति मध्यप्रदेश राज्य की है। मध्यप्रदेश भी ग्रामीण जनाधिक्य वाला राज्य है। भले ही आज हम सूचना प्रौद्योगिकी की क्षेत्र में देश को विश्व में अग्रणी मानते हों किंतु वास्तविकता यह है कि अधिकांश ग्रामीण जनता आज भी निर्धनता व विपन्नता भरा नारकीय जीवन जीने के लिए विवश हैं।

ग्रामीण विकास का अभिप्राय भी मात्र जीवन की आवश्यक वस्तुओं यथा–रोटी, कपड़ा और मकान ही नहीं है अपितु ग्रामीण लागों की आत्मनिर्भरता, सहभागिता, प्राकृतिक संसाधनों का यथोचित उपभोग व संरक्षण करते हुए समाज के प्रत्येक वर्ग एवं प्रत्येक व्यक्ति के सामान–आर्थिक–सामाजिक विकास में निहित है। विकास के संदर्भ में प्रथम चरण आर्थिक है एवं द्वितीय चरण सामाजिक तथा आधारभूत सुविधाओं का विकास है।

वस्तुतः किसी भी देश, राज्य या जिले के विकास के संदर्भ में आर्थिक–सामाजिक घटक अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं जिनका अध्ययन किये बिना विकास के अध्ययन की कल्पना व्यर्थ है। डिंडौरी जिला न केवल ग्रामीण जनसंख्या बहुल डिंडौरी जिला है अपितु यहाँ जन–जातीय लोगों की संख्या का अनुपात भी मध्यप्रदेश के जिलों में सर्वोच्च का 58 प्रतिशत है तथा ग्रामीण जनसंख्या का अनुपात 10 प्रतिशत है। इतना ही नहीं जिले की अधिकांश आबादी वनाच्छादित क्षेत्रों में निवास करती है जिनकी जीविका अधिकांश रूप से वनोपजों के संगृहण एवं विपणन पर आधारित है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य की पूर्ति हेतु डिंडौरी जिले के सामाजिक–आर्थिक घटकों एवं विकास में इनक समस्याओं का अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक है। अतरू अनावश्यक विस्तार दोष से बचते हुए डिंडौरी जिले में व्याप्त आर्थिक–सामाजिक समस्याओं का संक्षिप्त किंतु सार्थक विवरण यहाँ प्रस्तुत है। यद्यपि जिले में अनेक आर्थिक–सामाजिक समस्याएँ विद्यमान हैं, तथापि जिले के विकास के मार्ग में अवरोध उत्पन्न, करने वाली प्रमुख आर्थिक–सामाजिक बाधाओं का अध्ययन निम्न बिंदुओं में किया जा सकता है –

1. बीमारियाँ
2. जनजातियों का लोप
3. संतुलित भोजन की समस्या
4. वस्त्रों की समस्या
5. मादक वस्तुओं का सेवन
6. शिक्षा की समस्या
7. आवागमन के साधनों की समस्या
8. बाल विवाह
9. भाषा संबंधी समस्या
10. सांस्कृतिक विभिन्नता
11. कृषि संबंध समस्या
12. वन संबंधी अधिनियम (आदिवासियों के लिये अलग से वनसंबंधी अधिनियम है।)
13. बेकारी की समस्या
14. अंधविश्वास

## निष्कर्ष

आदिवासी समाज एवं जनजातीय समाजों का सामाजिक एवं आर्थिक अध्ययन करना विद्वानों की एक सुदीर्घ परम्परा रही है। आधुनिक समाजों की तुलना में जनजातीय समाज की सभ्यता और संस्कृति को विकासक्रम में बहुत पिछड़ा हुआ और श्रम विभाजन की दृष्टि से सरल श्रम विभाजन से प्रभावित समाज माना गया है।

भारत के हृदय स्थल म.प्र. मे इन जातियों की काफी बड़ी संख्या है अध्ययन के क्षेत्र डिंडौरी में ही गोंड, झारिया, बैगा, अगरिया इत्यादि जनजातियां पायी जाती हैं। जिले से जुड़े हुये आदिवासी क्षेत्रों में शहरीकरण का प्रभाव कुछ मात्रा में दिखाई देता है परन्तु इस परिवर्तन को पूर्ण नहीं माना जा सकता शहरों से दूर ऐसे क्षेत्र जहाँ विकास के संसाधन नहीं पहुंच पाये हैं आवागमन के साधन अभी पर्याप्त मात्रा में सुलभ नहीं हो पाये हैं वहां यह प्रकृति पुत्र अभी भी अपनी आदिम व्यवस्था में जी रहे हैं।

आदिवासी अर्थव्यवस्था अत्यंत कमजोर मानी जा सकती है, जहाँ अन्य समाजों ने अपने परम्परागत व्यवसाय से हट कर अनेक दूसरे कार्य प्रारंभ कर दिये हैं वहीं आदिवासी समाज आज भी अपने परम्परागत व्यवसाय लघुवनोपज आधारित कृषि आधारित, पशुपालन एवं शिकार इत्यादि तक ही सीमित रह गये हैं। आदिवासी समाज औद्योगिकरण वर्तमान समय तक दिखाई नहीं दे रहा है। आधुनिक तौर तरीके अपनाने वाले व सभ्य कहे जाने व समाज की अपेक्षा पिछड़े रह जाने वाले आदिवासि समाज का आर्थिक जीवन भौगोलिक पर्यावरण के प्रत्यक्ष प्रभाव ओत–प्रोत है पर्यावरण के अनुसार ही उनका जीवन व्यतीत होता है।

संभाग की प्रमुख वनोपजें चाहे वे राष्ट्रीकृत हो या अंतरराष्ट्रीयकृत सभी ने आदिवासी समाज की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है विशेषकर उस समयावधि में जब आदिवासी समुदाय कृषि कार्य नहीं कर रहा होता है। राष्ट्रीयकृत वनोपजों तेंदूपत्ता, हर्रा, साल बीज और किसी भी प्रकार की गोंद इनके व्यापार पर सराकर का पूर्ण नियंत्रण है अतः आदिवासियों द्वारा संग्रहित किया गया सम्पूर्ण तेंदूपत्ता, हर्रा एवं साल बीज तो सरकार के द्वारा सहकारी समितियों के माध्यम से क्रय किया जाता है।

आदिवासी विकास की योजनाऐं उनके विकास में सहायक सिद्ध हो रहीं हैं यह सरकारी आंकड़े प्रदर्शित करते हैं परन्तु वास्तविकता में इन योजनाओं का वास्तविक लाभ आदिवासी समाज को नहीं मिल पा रहा है। अध्ययन में यह पाया गया कि उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में विशेष प्रभाव नहीं पड़ा है आज भी वे भयंकर दरिद्रता के चपेट में हैं।

## सुझाव

आदिवासी वर्तमान युग की सभ्यता से अभी भी पिछड़े है अतः इन समस्याओं के उन्मूलन हेतु सुझाव निम्नानुसार हैं –

1. डिंडौरी जिले के आदिवासियों की आय का प्रमुख स्त्रोत कृषि है अतः आदिवासियों को पर्याप्त कृषि भूमि उपलब्ध करवाने का प्रबंध करना चाहिये।

2. कृषि कार्य से संबंधित आधुनिक तकनीकी की शिक्षा हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किये जाने चाहिये।

3. इस बात का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिये कि इस प्रकार के प्रशिक्षण कार्यक्रम आदिवासियेां की अपनी स्थानीय भाषा में आयोजित किये जायें ताकि इस प्रकार के कार्यक्रमों का वास्तविक लाभ इन गरीब आदिवासियों को प्राप्त हो सके।

4. सरकार को इन गरीब आदिवासियों को निःशुल्क कृषि के नवीन उपकरण रासायनिक खाद एवं उन्नत बीज उपलब्ध करवाना चाहिये।

5. आदिवासियों की आवश्यकताओं की पूर्ति को ध्यान में रखते हुये प्रभावी एवं सुरक्षित वृक्षोरोपण करना चाहिये,जिससे इन्हें ईधन मवेशियों के लिये चारा एवं विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए लकड़ी की प्राप्ति हो सके।

6. वनीकरण की योजनाओं को दीर्घकालीन रूप से क्रियान्वित करना होगा जिससे स्थानीय आदिवासियों को नियमित रूप से रोजगार प्राप्त हो सके।

7. प्रमुख अराष्ट्रीयकृत लघु वनोपजों में इमली, महुआ, लाख बहेड़ा, आंवला, चिरौंजी, कुसुमबीज, चिरौटा मोम एवं शहद को राष्ट्रीयकृत लघु वनोपज घोषित करें।

8. वनोपजों पर आधारित उद्योगों को उनके प्राप्ति स्थलों के पास ही स्थापित किया जाये ताकि स्थानीय संग्रहणकर्ताओं को रोजगार की प्राप्ति हो सके।

9. महुआ फूल को कोल्ड स्टोरेज में रखकर वापस मांग के समय आदिवासियों को उचित मूल्य पर दिया जाये।

10. उपरोक्त वर्णित सभी सुझाव तभी प्रभावी हो सकते हैं जबकि आदिवासी शिक्षित हो अतः शिक्षा के प्रसार–प्रचार पर विशेष ध्यान एवं बल देने की आवश्यकता है।